श्री रामानन्द सम्प्रदाय के प्रणेता स्वामी रामानन्द

अंजना शर्मा
शोधार्थी
संस्कृत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

श्रीरामानन्द सम्प्रदाय का अपर नाम 'श्री सम्प्रदाय' है। श्रीरामानन्दीय वैष्णवगण अधिकांशतः अपने नाम के पश्चात् 'श्रीवैष्णव' विशेषण प्रयुक्त करते हैं। श्री जनकपुर धाम स्थित श्रीरामानन्द आश्रम के संस्थापक तथा अनेक ग्रन्थों के रचयिता पं. श्री अवधकिशोर दास जी महाराज अपने नाम के पश्चात् सदा श्री वैष्णव शब्द का प्रयोग करते थे, यद्यपि उनका अपर नाम प्रेमनिधि था। इसी प्रकार अनेक विरक्त एवं सद्गृहस्थ सज्जन भी अपने नाम को 'श्री वैष्णव' विशेषण से सज्जित करते हैं।

'श्री सम्प्रदाय' का विशेष तात्पर्य यह है, कि इस सम्प्रदाय की प्रवर्तिका स्वयं 'श्रीजी' श्री सीता जी हैं।

मंत्र परम्परा में स्पष्ट है कि जगज्जननी श्री जानकी जी ने श्रीराम मंत्र की दीक्षा सर्वप्रथम श्री हनुमान जी को दी थी। तत्पश्चात् ब्रह्मा, वशिष्ठ जी आदि आचार्यों से यह परम्परा अग्रसर हुई इस दृष्टि से भी 'श्रीजी' इस सम्प्रदाय की आदि आचार्या हैं -

श्रियः श्रीरपि लोकानां दुःखोद्धरण हेतवे,
हनूमते ददौ मंत्रङ्तु सदा रामाङ्घ्रिसेविने ।
ततस्तु ब्रह्मणा प्राप्तिमुह्यमानेन मायय ।
कल्पान्तरे तु रामो वै ब्रह्मणे दत्तवानिमम्॥

पंचगंगाघाट काशी में जहाँ जगद्गुरु स्वामी श्री रामानन्दाचार्य जी महाराज विराजते थे उस स्थान का नाम ही 'श्रीमठ' है। इसका तात्पर्य यही है, कि श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में श्रीजी का लोकोत्तर वैशिष्ट्य है, जिसकी झाँकी इन प्रसंगों में स्पष्ट झलकती है। श्रीमद्वाल्मीकि रामायण का प्रारम्भ जिस प्रकार 'मा निषाद' आदिकाव्य के इस आदि

श्लोक से हुआ है, अर्थात् 'मा-लक्ष्मी' श्री लक्ष्मी जी का अपर नाम ही कोषानुसार लक्ष्मी श्रीसीता है 'इन्दिरा लोकमाता मा क्षीरोदतनया रमा' एतावता श्री लक्ष्मी 'श्री सीता' नाम से ही प्रथम आदिकाव्य विभूषित हुआ है। इसीलिये इसको 'सीतायाश्चरितं महतं' कहने में एक यह भी कारण है

श्री सीतानाथसमारम्भां रामानन्दार्यमध्यमाम्।
अस्मदाचार्यपर्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम्।।

यहाँ भी प्रथम श्री सीता नामोच्चारण कर ही श्रीसीतापति का स्मरण किया गया है। वस्तुतः श्रीजी के पुरुषकारत्व में ही श्रीराघवेन्द्र की कृपाप्राप्ति सम्भव है। इसका निदर्शन करते हुए 'श्री शब्द' की षोढा व्युत्पत्ति कर 'श्री गुण सुधासार लहरी' ग्रन्थ में उल्लिखित है -

'श्रितास्यन्यैः सर्वैः श्रयसि रमणं संश्रितगिरः।
श्रृणोषि प्रेयांसं श्रितजनवचः श्रावयसि च ॥

श्रृणास्येतद्वोषाञ्जननि निखिलान्सर्व जगती।
गुणैः श्रीणासि त्वं तदिह भवती श्रीरितिविदुः॥

हे अम्ब! सम्पूर्ण जगत आपका आश्रयण करता है और आप अपने रमण श्रीराम का आश्रयण करती हैं। आश्रितों के विज्ञापन को सुनती हो तथा अपने प्रियतम भगवान् को आश्रितों की प्रार्थना सुनाती हो। आश्रितों के दोषों का नाश करती हो। समस्त जगत् की अपने गुणों से वृद्धि करती हो-इसी से तत्वदर्शी गण आपको श्री कहते हैं- यही कारण है कि अत्यन्त यशस्वी श्री लक्ष्मण कुमार ने भ्राता श्री राघवेन्द्र के श्रीचरणों को पकड़ कर श्री सीताजी के समक्ष प्रभु से वन में साथ लेजाने की प्रार्थना की -

स भ्रातुश्चरणौ गाढं निपीड्य रघुनन्दनः।
सीतामुवाचातियशा राघवं च महाव्रतम् ।।

प्रभु श्रीराम ने वन गमन की आज्ञा दे दी और पञ्चवटी पहुँचने पर श्री लक्ष्मण कुमार से कहा जल तथा छाया से परिपूर्ण किसी देश में अपनी सुख-सुविधा के अनुकूल पर्णशाला की रचना करें प्रभु की वाणी सुनते ही शरणागति धर्म

मर्मज्ञ शिरोमणि लक्ष्मण कुमार घबरा गये। उन्होंने भक्ति परवश अनुमान लगाया, कि प्रभु ने मुझे स्वतन्त्र जानकर ऐसी आज्ञा दी है। क्योंकि स्वामी की रुचि के समक्ष सेवक की रुचिपूर्तिसेवा धर्म के विरुद्ध है- 'रमते यत्र वैदेही त्वमहं चैव लक्ष्मण'। इस प्रकार प्रभु के मुखारविन्द से अपने रमण का भी साथ में संकेत सुन कर भयभीत होकर यह निश्चय कर लिया कि प्रभु ने मेरा परित्याग कर दिया, तभी मेरी रुचि और रमण की बात कही है। अतएव भयभीत होकर पुनः श्री किशोरी जी सहित श्री राघवेन्द्र की शरण ग्रहण की -

एवमुक्तस्तु रामेण लक्ष्मणः संयताञ्जलिः।
सीतासमक्षं काकुत्स्थमिदं वचनमब्रवीत् ।।

इस प्रकार बद्धाञ्जलि होकर प्रार्थना की। तत्पश्चात् पृथ्वी को धारण करने वाले शेषावतार जीवाचार्य होने पर भी श्री सुमित्रानन्दन ने श्री किशोरी जी के पुरुषकारत्व से पुरस्कृत होकर स्वापेक्षित पारतन्त्र्य तथा युगल कैंकर्य को प्राप्त किया। इसी प्रकार असुर प्रकृति के जयन्त ने काकरूप धारण कर जब जगज्जनी का अपराध किया-उस समय भी प्रभु श्रीराम के कोप से भयभीत होकर तीनों लोकों की परिक्रमा कर सर्वत्र भ्रमण कर जब कहीं आश्रय नहीं मिला तब निराश्रय होकर प्रभु की शरण में गया। उस समय श्री किशोरी जी के पुरुषकार के कारण ही प्रभु ने उसकी रक्षा की- 'बधार्हमपि काकुत्स्थ कृपया पर्यपालयत' इस श्लोक में भाष्यकारों के अनुसार कृपया का अर्थ है-'कृपारूपिण्या जानक्या पर्यपालयत्' कृपारूपिणी श्री जानकी जी के द्वारा ही उसकी रक्षा हुई। पद्मपुराण में तो अत्यन्त सुस्पष्ट है- प्राण संकट के कारण काकासुर जयन्त जब प्रभु के श्रीचरणों में उल्टा गिरा, तब श्री सीताजी ने ही उसके मस्तक को- (उस चञ्चुभाग, को जिससे उसने प्रहाररूप जघन्य अपराध किया था, प्रभु के चरणारविन्दों में लगा कर उसकी प्राणरक्षा हेतु प्रार्थना भी की, ऐसी कृपामयी करुणामयी देवी हैं -

पुरतः पतितं देवी धरण्यां वायसं तदा।
तच्छिरः पादयोस्तस्य योजयामास जानकी॥

प्राणसंशयमापन्नं दृष्ट्वा सीताथ वायसम्।
त्राहि त्राहीति भ्रिमुवाच दयया विभुम॥

ऐसे कितने ही उदाहरण हैं- अनेक अपराधी जीवों पर 'श्रीजी' ने स्वयं कृपा-दृष्टि कर श्री राघवेन्द्र सरकार की

कृपा की भी वृष्टि करायी है। इसीलिये 'श्रीसम्प्रदाय' में किसी वर्ण या जाति का बन्धन नहीं है। सभी जीवों का इसमें अधिकार है। श्री सम्प्रदाय अत्यन्त उदार है।

श्रीरामानन्द दिग्विजय में स्वामी श्री भगवदाचार्य जी ने स्पष्ट संकेत किया है कि गुरुदेव श्री राघवानन्द स्वामी जी ने अपने प्रिय शिष्य स्वामी श्री रामानन्द जी को 'श्री सम्प्रदाय' के शत्रुओं को पराजित कर श्रीराममंत्र के प्रचारप्रसार का आदेश दिया था-

श्री सम्प्रदाय परिपन्थिजनौघसात्या।
श्री राममन्त्रमपि भूमितले जनेषु।
वत्स प्रचारय भवोद्भव भीतिजालं।
विच्छेदनक्षममतिप्रथितप्रभावम् ॥

साथ ही यह भी कहा, कि श्री सीताजी के साथ ही श्रीराम जी की उपासना श्रेयस्कर है

राम एव सदोपास्यो रमया सह सर्वदा ।
तिरस्कारो न कर्तव्यो देवान्तर इह क्वचित् ॥

एतावता श्री रामानन्द सम्प्रदाय का अपर नाम श्रीजी के वैशिष्ट्य के कारण ही 'श्री सम्प्रदाय' नाम से भूमितल पर चिरकाल से सुप्रसिद्ध है, जो परम्परा एवं शास्त्रीय दृष्टि से भी सर्वथा उपयुक्त व उचित है।

सन्दर्भ

1. सीतोपनिषद् / भूमिकाभागो / पृ. 6
2. आनन्दभाष्य-मंगलाचरण
3. श्रीगुणसुधासारलहरी / पृ. 19
4. सीतोपनिषद् / पृ .22
5. सीतोनिषद् / पृ. 26
6. श्रीरामानन्ददिग्विजय / पृ. 168
7. श्रीरामानन्ददिग्विजय / पृ. 41